चैतन्य लहरी

हिन्दी सितंबर-अक्तूबर २०१४

इस अंक में

समर्पण का जीवन ...४

जगदम्बा ही आदिशक्ति ...२०

सामूहिकता हमारे उत्थान का मूलाधार ...२८

आज का दिन लक्ष्मी की पूजा का दिन है और लक्ष्मी एक ऐसी 'माँ' है, हर हालत में आपका साथ नहीं छोड़ेगी। सिर्फ इतना आप करिए लक्ष्मी को 'माँ' स्वरूप समझिये और बहुत सफाई के साथ, ऐसे जो लोग हैं वो तो सहजयोग में आएंगे ही लेकिन और भी लोग आ जाएंगे क्योंकि इसका असर सब को होगा। आप सब पर लक्ष्मी की कृपा रहे और रहेगी ये मैं जानती हूँ।

प.पू.श्रीमाताजी, नोएडा, १५ नवम्बर १००८

समर्पण का जीवन

काऊली मैनर, यूके, ३१ जुलाई १९८२

आज मैं तुम्हें कुछ कहने जा रही हूँ। यह मुझे बहुत पहले बताना चाहिये था।

जैसा मैंने आज आपको बताया कि यह आवश्यक है, कि आप मुझे सश्रद्ध मान्यता दें। मान्यता देना निश्चित है, यह शर्त अनिवार्य है। मैं इसे बदल नहीं सकती। जैसा क्राइस्ट ने पहले ही कह दिया है, आप मेरा (क्राइस्ट का) विरोध करें तो वह सहा जा सकता है, उसे क्षमा कर दिया जाएगा, किन्तु आदिशक्ति का विरोध तनिक भी नहीं। यह एक बहुत बड़ी चेतावनी है। शायद लोग नहीं समझते इसका क्या अर्थ है। यह सच है आपमें से कोई भी मेरे विरुद्ध नहीं है, यह नि:सन्देह है। आखिर आप मेरी सन्तान हैं। मैं आपको बहुत प्यार करती हूँ और आप मुझे प्यार करते हैं। यह तो केवल क्राइस्ट ने आपको चेतावनी दी है। सोचना चाहिये जिस वेग से हमें उन्नति करनी चाहिये उस वेग से क्यों नहीं कर रहे हैं।

जब लोग सम्मोहित कर दिये जाते हैं तब वे अपने गुरुओं के सामने बिल्कुल लम्बे पड़ जाते हैं। जब उन्हें सम्मोहित कर दिया जाता है तो वे सब कुछ दे देते हैं, अपना रुपया-पैसा, घर-परिवार, बच्चे और लम्बे लेट जाते हैं, अपने गुरु के विषय में बिना कोई प्रश्न पूछे, बिना कुछ जाँच पड़ताल किये, बिना उसकी जीवनी के बारे में कुछ पता लगाने की कोशिश किये। ऐसे लोग बड़ी जल्दी अंधकार में पड़ जाते हैं और उनका यह अंधकार बढ़ता ही जाता है और अन्त में वे पूर्ण विनाश को प्राप्त होते हैं। किन्तु आप लोग सहजयोगी हैं और आपको स्वयं को संवारना है।

मैं पहले आपके अहंभाव (इगो) को ठेस नहीं पहुँचाना चाहती थी। इन शब्दों में आपको बताना नहीं चाहती थी। शायद यह पहली बार आपसे मैं ये कह रही हूँ कि आपको अपने को मुझे पूर्ण रूप से समर्पित करना है-सहजयोग को नहीं, बल्कि मुझे। सहजयोग केवल मेरा एक अंग है। सब कुछ त्याग कर आपको समर्पण करना है-पूर्ण समर्पण। अन्यथा आप ऊँचे नहीं उठ सकते। बिना प्रश्न, बिना तर्क-वितर्क। पूर्ण समर्पण द्वारा ही आप यह पा सकते हैं।

अभी भी लोग 'बाधा ग्रस्त' होते हैं, अभी भी समस्याओं में फँस जाते हैं। इसका क्या कारण है? बहुत से लोग मुझसे पूछते हैं-माँ, एक बार आत्मसाक्षात्कार पाने के बाद, कैसे हम दुबारा नीचे गिर जाते हैं? इसका एकमात्र कारण है कि समर्पण सम्पूर्ण नहीं है। यदि पूर्ण समर्पण स्थापित नहीं हुआ है, अभी भी जितना चाहिये उतना ज्ञान आपको नहीं है कि मैं दैवी (डिवाइन) सत्ता हूँ। मेरा मतलब यह नहीं आप सब - किन्तु फिर भी यदि आप अपने हृदय में देखें, मस्तिष्क में झाँकें, आप देखेंगे कि पूर्ण श्रद्धा जो आप, उदाहरणार्थ क्राइस्ट या कृष्ण के प्रति या जो और पहले हो चुके हैं

उनके प्रति आपकी थी, वह नहीं है।

कृष्ण ने कहा था 'सर्वधर्माणाम् परित्यज्य मामेकम् शरणम् व्रज' सारे सांसारिक धर्मों को भूल जाओ। यहाँ 'धर्मों' का अर्थ यह नहीं है जैसे हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम आदि किन्तु उनका अभिप्राय था जो धारणा अर्थात् समाज रचना का संरक्षण ऐसे धारणाओं को भूल जाओ और मुझे पूर्ण समर्पण दो। यह उन्होंने छः हजार वर्ष पहले कहा था। और आज भी ऐसे अनेक हैं जो अभी भी कहते हैं, 'हमने अपने को श्रीकृष्ण को पूर्ण समर्पित किया हुआ है।' किन्तु आज श्रीकृष्ण कहाँ हैं? यहाँ तक कि वे जिन्हें मैंने आत्मसाक्षात्कार प्रदान किया है ऐसा कहते हैं। यह सच है कि कृष्ण में और मुझ में कोई अन्तर नहीं। किन्तु आज वह मैं हूँ जिसने आपको आत्मसाक्षात्कार प्रदान किया है। किन्तु हमारा प्रथम ध्यान अपने धन्धे, अपनी निजी समस्याओं और अपनी पारिवारिक समस्याओं पर रहता है और समर्पण अन्त में आता है।

मैं भ्रामक हूँ-यह सत्य है। मेरा नाम है 'महामाया'। निस्सन्देह मैं भ्रामक हूँ। किन्तु मैं भ्रम उत्पन्न करती हूँ बस आपको परखने के लिये।

अब समर्पण प्रगति, उन्नति का एक बहुत महत्वपूर्ण अंश है। क्यों? क्योंकि जब आप ऐसी अवस्था में स्थित हैं, जब कि आपके अस्तित्व को खतरा सिर पर है, ऐसे समय जब समस्त विश्व ऐसी आपात स्थिति में है जहाँ वह पूर्ण नष्ट होने जा रहा है, ऐसे समय यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि आप उस चीज़ को जो आपको बचाने वाली है जकड़ कर पकड़ लें, पूर्ण शक्ति, पूर्ण श्रद्धा के साथ। जैसे आप यदि साधारण पानी में भीग गये हैं तो कोई बात नहीं। किन्तु यदि आप समुद्र में डूब रहे हैं और प्रश्न है, यह क्षण जीवन वह क्षण मृत्यु, ऐसे समय अगर कोई हाथ आपको बचाने को अग्रसर होता है तब आपको और सोचने का समय नहीं होता। तत्काल उसको पूर्ण शक्ति और पूर्ण विश्वास के साथ जकड़ लेना होता है।

जब हम बाधाग्रस्त होते हैं, जब हम विकारों से घिरे होते हैं, हमें उनकी जानकारी होती है और हम कुछ भ्रम में पड़ जाते हैं ऐसे समय हम दृढ़ता से पकड़ना चाहते हैं। किन्तु दूसरी ओर 'बाधाएं' आपके मन में ऐसे विचार उत्पन्न करती हैं, जो हानिकारक हैं। अतः एक बड़ा द्वंद्व सा आरम्भ हो जाता है। ऐसे समय सबसे अच्छा रास्ता क्या है? सबसे अच्छा रास्ता है और सब कुछ भूल जाओ, भूल जाओ कि कोई बाधा है या आप पर कोई भूत आरूढ़ है या कुछ भी। अपनी जितनी भी शक्ति है, अपनी सम्पूर्ण शक्ति से मुझे पकड़े रहो।

किन्तु हमारी समर्पण की शैली बड़ी फैशनेबल और आधुनिक है जिसमें सहजयोग अल्प महत्त्व रखता है और माँ भी यों ही होती है। मुझे खेद है इससे काम नहीं बनेगा। यह मुझे आपको बताने की आवश्यकता नहीं क्योंकि यदि आप देवी माहात्म्य पढ़े तो काफी है। यदि आप देवी के १००० नाम पढ़ें तो भी काफी है, कि वह केवल भक्ति द्वारा प्राप्त की जा सकती है। वह केवल समर्पण द्वारा प्राप्त की जा सकती है। वह भक्त-प्रेमी, समर्पण युक्तों की प्रेमी है। यह कहीं नहीं लिखा कि वह ऐसे लोगों की प्रेमी है, जो अच्छा बोलते हैं, जो अच्छा तर्क करते हैं, जिनका पहनावा, रहन-सहन अच्छा है, जिनका परिवेश अच्छा है। बस वह भक्त प्रेमी हैं। और यह श्रद्धा, भक्ति एक सनक या ऐसी कुछ नहीं होनी चाहिये, किन्तु स्थायी, निरन्तर धारावाही, ऊर्ध्वगामी होनी चाहिये। अब आगे के विकास के लिये बस यही रास्ता है।

हमारे लिये अनेक छोटी छोटी समस्याएं महत्त्व रखती हैं। किसी को मकान की, किसी को कालिज प्रवेश की, किसी को रोजगार की। ये सब धर्म हैं जिनके लिये श्रीकृष्ण ने कहा है, 'सर्व-धर्माणां परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।' समस्त धर्मों को त्याग दो-इन सब तथाकथित धर्मों को, जैसे 'पत्नी धर्म' पत्नी का कर्तव्य है, 'पति धर्म' पति का कर्तव्य है, 'पुत्र धर्म' पुत्र का कर्तव्य है, 'पिता धर्म' पिता का कर्तव्य है, नागरिक का धर्म, विश्व नागरिक का धर्म। यह सब धर्म पूर्ण रूप से त्याग दो। और पूर्ण रूप से, हृदय से आपको मुझे समर्पण करना है।

मैं जो हूँ वह हूँ, वही मैं सदैव थी और रहूँगी। मैं न बढ़ूंगी, न घटूंगी। मैं एक सनातन व्यक्तित्व हूँ। आप, जितनी आपमें सामर्थ्य है मुझ से प्राप्त कर लें, इस युग में अपने जन्म का उपयोग कर लें। अपनी पूर्ण परिपक्वता तक बढ़ें, परमात्मा आपके माध्यम से जो परिकल्पना कार्यान्वित करना चाहता है उसे क्रियान्वित करने योग्य बनें। ज्यों ही समर्पण जागृत होता है, आप गतिमान बन जाते हैं। बस उसमें दृढ़ रहें।

इसके लिये 'ध्यान' एक मात्र पथ है, ऐसा कहना चाहिये। यह सच है कि आप बुद्धि से अनेक काम कर सकते हैं, तर्क द्वारा आप मुझे स्वीकार कर सकते हैं, भावुकता में आप अपने आपको मेरे निकट अनुभव कर सकते हैं, किन्तु वास्तविक मार्ग है, ध्यान द्वारा, समर्पण द्वारा। ध्यान समर्पण के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। पाश्चात्य देशों के आधुनिक मानव के लिये वह कठिन कार्य है। वह केवल उनके सामने समर्पण करता है, जो मेसमराइज्ड करते हैं, जो उन्हें पूर्ण मेसमराइज्ड कर दें। जो लोग उन्हें मेसमराइज्ड कर दें उनके वह पूर्ण दास बन जाते हैं। परन्तु जब वे अपने स्वातंत्र्य में स्थित रहते हैं उस समय उनका अहंभाव उनकी आत्मा से अधिक बलशाली होता है-जब वे अपने स्वातंत्र्य

में होते हैं। स्वतन्त्र देशों के सर्वनाश का यही कारण है। क्योंकि अहंभाव कार्यशील होता है, न कि आत्मा। जब वे स्वातंत्र्य में स्थित होते हैं तब वे अपने अहंभाव पर नियंत्रण नहीं कर सकते। केवल जब कोई उनके अहंभाव को उलझा कर बंधन में जकड़ देता है और उन्हें मेसमराइज्ड कर देता है, तब वे ठीक हो जाते हैं, वे बन्दी हो जाते हैं और पूर्ण समर्पण कर देते हैं। इन कपटी लोगों ने आपको दास बनाने की कला में जैसी निपुणता प्राप्त कर ली है, उससे यह स्पष्ट है।

अपने पूर्ण स्वातंत्र्य में आपको समर्पण करना चाहिये।

स्वातंत्र्य का अर्थ अहंभाव नहीं है, यह आप समझ लें। अहंभाव से स्वातंत्र्य का नाश हो जाता है। इतना ही नहीं उससे स्वातंत्र्य विकृत, कान्तिहीन व कुरूप हो जाता है। अपने सूक्ष्मतम स्वरूप में स्वातंत्र्य पूर्ण अहं-शून्यता है, जिसमें कोई खुरखुरापन न हो, पूर्ण स्निग्धता, पूर्ण रिक्तता, बांसुरी की भांति, जिससे परमात्मा का संगीत सुन्दर बज सके। वह है पूर्ण स्वातंत्र्य बिना किसी शर्त के।

हम यह समझ लें कि हम दलदल में फँसे हैं, अज्ञान की दलदल, पाप की दलदल। अज्ञान से पाप उत्पन्न होता है। इस दलदल से हम कैसे निकल सकते हैं? जो हमें उससे निकालने की कोशिश करेगा वह भी उसमें फंस जायेगा। जो उसके पास भी आना चाहता है वह भी दलदल में फँस जाता है, उसमें समा जाता है। हम जितना दूसरों से सहायता लेने की कोशिश करते हैं, उतना हम और अधिक उन्हें दलदल में खींच लेते हैं और स्वयं नीचे धंसते जाते हैं।

अत: इस कुण्डलिनीरूपी वृक्ष की वृद्धि होनी चाहिये। और उस वृक्ष से स्वयं परमात्मा, स्वयं परब्रह्म आपको उस दलदल से बाहर खींचेंगे। यह वृक्ष दलदल से बाहर ऊँचा बढ़ता है और परब्रह्म एक-एक करके आपका हाथ फकडेंगे और आपको झूले की पींग की तरह बाहर निकालेंगे। किन्तु फिर भी जब आपको वह बाहर निकाल रहे हैं उस समय यदि आपकी पकड़ मजबूत नहीं है, तो आप फिर फिसल जाते हैं-आप थोड़ा बाहर निकलते हैं और फिर फिसल कर दलदल में धंस जाते हैं। जब दलदल से बाहर निकलते हैं तो बड़ा आनन्द आता है। किन्तु उस समय भी पैर पूरे बाहर नहीं आये हैं। आप पूरे स्वच्छ नहीं हुए हैं। जब तक आप पूर्ण स्वच्छ, निर्मल नहीं होते तब तक आप पूर्ण आशीर्वादित कैसे हो सकते हैं? आप परमात्मा का पूर्ण आशीर्वाद अर्जन करें, परमात्मा के प्रेम में रम जाये।

देख कर आश्चर्य होता है, कैसे वे लोग जो इन कपटी गुरुओं के पास जाते हैं उनसे चिपक जाते हैं, ऐसा अपार समर्पण देते हैं कि आप चकित हो जाते हैं। वे ढीले-ढाले, अकर्मण्य से हो जाते हैं।

जब तक उनका पूर्ण सर्वनाश नहीं हो जाता तब तक उनके पास जो कुछ भी है वे समर्पण करते रहते हैं।

किन्तु जब लोग सहजयोग में आते हैं तब वे समर्पण नहीं करते, बल्कि उनका लालन-पालन, उनका पोषण, देख-रेख की जाती है। उनका स्वास्थ्य सुधरता है, आर्थिक उन्नति होती है, उनकी मानसिक स्थिति सुधरती है, उनके सम्बन्ध सुधरते हैं, हर प्रकार वे पहले से अच्छा अनुभव करते हैं, उनकी हालत सुधरती है। हर समय उन्हें लाभ प्राप्त होता है। हमारे आश्रम हैं, जो सुन्दर हैं, सस्ते हैं, वहाँ भोजन की सुविधा है, वहाँ उपलब्ध प्रत्येक सुविधा बढ़िया से बढ़िया है। वहाँ सब कुछ उपलब्ध है।

किन्तु हम नहीं सोचते यह सब पालन-पोषण किसलिए है? यह सब आशीर्वाद किसलिए है? यह है इसलिए कि आप ऊँचे उठें, आप पूर्ण रूप से दलदल से बाहर निकलें।

अब आपको दृढ़ रहना है, आपको समर्पित रहना है, आपको श्रद्धालु रहना है। हमारे मन में अनेक किन्तु-परन्तु हैं। हम छुपाव रखते हैं। हम अत्यधिक चातुरी दिखाते हैं। यह खतरनाक स्थिति है। आप सब अपने भीतर देखें, कौन से पूर्व संस्कार आपके पूर्ण समर्पण में बाधक हैं, किन कारणों से आप यह किन्तु-परन्तु रखते हैं, कौन सा भय, कौनसा अहंभाव, कौन से चरित्र-वैचित्र्य अभी भी दलदल में धकेल रहे हैं। कौन सी आसक्तियाँ, कौन से नाते बाधक हैं। आपको अपने को इन सबसे अलग करना है। जब तक आप पूर्ण रूप से इससे बाहर नहीं निकलते, काम नहीं बनने वाला।

अधपकी चीज़ों के लिये यहाँ जगह नहीं। सवाल है, अभी या कभी नहीं। यह जीजस ने कहा था। उन्होंने कहा था, 'तुम मुझे अपनी श्रद्धा और समर्पण दो और बाकी मुझ पर छोड़ दो।'

मैं जानती हूँ श्रद्धा और समर्पण में कौन आगे बढ़ रहे हैं। मैंने देखा है लोग खूब सुधर रहे हैं। मेरे सामने आने, प्रत्यक्ष मिलने की आवश्यकता नहीं। मेरी शारीरिक उपस्थिति आवश्यक नहीं। सब कुछ सर्वत्र व्याप्त शक्ति में वर्तमान है। यही मेरी जीवन-प्रणाली है और वह तुम्हारे विषय में एक-एक बात जानती है। और एकमात्र अपनी भक्ति, अपनी श्रद्धा और समर्पण के द्वारा तुम मुझे पा सकते हो।

तुम्हारी दैवी शक्तियों का सम्पूर्ण उदीयमान होना ही मुझे पाना है। यह बड़ा सुगम है, इसे सुगम बनाया गया है। मैं उनसे प्रसन्न होती हूँ जो सरल, भोले, निश्छल, प्रेम पूर्ण और परस्पर स्नेहयुक्त होते हैं। मुझे प्रसन्न करना बड़ा आसान है। जब मैं तुमको परस्पर प्रेम करते देखती हूँ, एक दूसरे की प्रशंसा

करते देखती हूँ, परस्पर सहायता करते, परस्पर आदर करते, एक साथ खुलकर हंसते, परस्पर संसर्ग में आनन्द अनुभव करते देखती हूँ, तब मुझे अपना पहला वरदान, पहला आनन्द प्राप्त होता है।

समर्पण भाव में परस्पर प्रेम करने की कोशिश करो, क्योंकि तुम सब मेरी सन्तान हो, मेरे प्रेम से सृजित किए गये हो। मेरे प्रेम के गर्भाशय में तुम सबने वास किया है। अपने हृदय से मैंने तुम्हें ये आशीर्वाद दिये हैं। किन्तु मैं विचलित हो जाती हूँ और मेरे हाथ काँपने लगते हैं और तुम फिर से दलदल में गिर पड़ते हो, जब मैं तुम को परस्पर झगड़ते देखती हूँ, ईर्ष्या और क्षुद्रताओं में लिप्त, ऐसी चीज़ें जो आपके विगत जीवन की साथी थीं। आपको मिलने वाली सहायता इतनी स्थूल नहीं है बल्कि वह बड़ी गहन सुरक्षा की अनुभूति है, जो आपके भाई-बहनों को प्रदान की जाती है। आपमें गहन प्रेम होना चाहिये। स्वार्थ-भाव के लिये सहजयोग में बिल्कुल स्थान नहीं, वह नहीं चल सकती। कंजूसी एक संकुचित मस्तिष्क की निशानी है। मैं यह नहीं कहती आप मुझे रुपया दें। किन्तु धन के प्रति हमारी दृष्टि, उससे हम कैसे चिपके रहते हैं, भौतिक पदार्थ, सम्पत्ति, वस्तुएं इत्यादि।

आपकी महानतम निजी सम्पदा है आपकी माँ। उसके द्वारा ही आपको ये अपने भाई-बहन मिले हैं।

अपनी उस पुरानी जिन्दगी से बाहर निकल आओ-वह बीती जिन्दगी, वह दलदल। अब उसका अन्त होना चाहिये। तुम भलीभाँति समझते हो कैसे मैंने अपने प्रेम की शक्ति से तुम सबको बचाया है। तुम जानते हो कैसे मैंने एक एक क्षण तुम्हें सहायता की है। तुम्हारी प्रत्येक इच्छा पूरी करने के लिये मैं आगे आई हूँ। जैसा मैंने कहा, यह एक तरफ की बात है-पोषण, संवर्धन। किन्तु अब तुम्हारी उन्नति। वह तुम्हारी ओर से आनी चाहिये। तुम्हारा उत्थान, उसके लिये तुम आगे बढ़ो। वह तुम्हें स्वयं क्रियान्वित करना होगा। कोई अन्य सहजयोगी अथवा मेरे द्वारा वह नहीं होगा। मैं तुम्हें केवल सुझाव दे सकती हूँ। इतना ही नहीं, चेतावनियाँ भी देती हूँ और सब कुछ आपके पास ही है। ऐसी सुन्दर व्यवस्था है। मुझे सब पता रहता है। पहले से मैं जानती हूँ। तुम्हें कहीं जाने की जरूरत नहीं। सब कुछ तुम्हारे भीतर ही है। तुम्हें रुपया-पैसा नहीं देना, कुछ नहीं देना। बस अपने अन्दर वह समर्पण जागृत कर लो।

देखो, यह सज्जन जिन्होंने मुझसे भेंट की, कहते थे कि बेरोजगार लोगों को राजनीतिज्ञ मनमानी की तरह नचाते हैं। आप अपने आपको परमात्मा को समर्पित कर दें, 'प्रभु, आपकी जैसी रुचि हो हमें नचायें।' किन्तु कैसे? मानो मेरे हाथ में एक ब्रश है और मैं कुछ चित्रण करना चाहती हूँ। और यदि

ब्रश चलने में कठिनाई उत्पन्न करता है, टेढ़ा-मेढ़ा है, परेशान करता है, प्रयोग में असुविधाजनक है, बेढ़ंगा, बेडौल है, तो आप उससे कैसे काम करेंगे? आपको बेडौल बनाने वाले समस्त विचार, आपकी सारी समस्याएं, आपकी सारी बाधाओं से मुक्ति पाने का सुगमतम उपाय है समर्पण।

अब स्वयं अपने भीतर झाँके और देखें, क्या आप समर्पणमय हैं? जो मेरा अंधानुकरण करते हैं, वे भी सही नहीं हैं। अंधानुकरण ठीक नहीं। सब कुछ तर्कसंगत रूप से सामने आता है, अंधानुसरण बिल्कुल नहीं।

जैसे कोई कहता है, 'मुझे डाक्टर के पास जाना है।' किन्तु अन्धानुयायी कहेगी, 'मैं डाक्टर के पास नहीं जाऊंगी, क्योंकि माँ ने कहा है वह मेरी देखभाल करती है।' और जब वह अन्धानुयायी बीमार पड़ जाती है तब वह माँ के पास आकर लड़ती है, 'माँ आपने कहा था आप मेरी देखभाल करती है। फिर मैं कैसे बीमार पड़ गई?' यह अन्धानुसरण है।

और समर्पण क्या है? भीतर, हृदय की गहराई से आप कहते हैं, 'सब कुछ माँ है। वह विद्यमान है। वही मेरी डाक्टर है, वह मेरी चिकित्सा करती हैं या नहीं, मैं स्वस्थ होता हूँ या नहीं इस बारे में मुझे कुछ नहीं कहना। मैं केवल माँ को जानता हूँ। अन्य किसी को मैं नहीं जानता।' यह अत्यन्त युक्ति संगत है। आप युक्ति पूर्वक जानते हैं कि माँ अधिकतम शक्तिमान हैं-यह सत्य है। और यदि यह सत्य है, वह मुझे स्वस्थ कर देगी। किन्तु यदि वह मुझे रोग-मुक्त नहीं करती तो वह जाने, यह उनकी इच्छा, उनकी शक्ति है। यदि वह मुझे स्वस्थ करना चाहती हैं, तो वह कर देगी। यदि वह ऐसा नहीं चाहती तो मैं अपनी इच्छा क्यों उस पर थोपूं?

श्रीगणेश का समर्पण देखिये। जब उनकी माँ ने कहा, 'अच्छा, कार्तिकेय और वह, दोनों भाइयों में जो धरती माता की परिक्रमा पहले करेगा उसे प्रथम पुरस्कार मिलेगा।' अब बेचारे गणेश के पास वाहन के रूप में एक छोटा चूहा था। किन्तु उनके पास बुद्धि थी। और कार्तिकेय के पास एक अत्यन्त तेज चलने वाला मोर था, जो उड़ता था। श्री गणेश ने मोर की ओर देखा और कहा, 'मेरी माँ से बड़ा कौन है? वह आदिशक्ति हैं। यह पृथ्वी क्या है? इसे किसने बनाया? मेरी माँ ने बनाया है। सूर्य को किसने बनाया? मेरी माँ ने बनाया। मेरी माँ से बड़ा कौन है? कोई नहीं। फिर क्यों न अपनी माँ की ही परिक्रमा कर लूँ? सारी पृथ्वी के चारों ओर परिक्रमा लगाने की आवश्यकता क्या है?' और कार्तिकेय के परिक्रमा लगाकर आने से बहुत पहले वह अपना पुरस्कार लेकर विराजमान थे।

उनके सरल भाव, भोलेपन ने उन्हें यह समझने की बुद्धि दी। यही युक्ति संगत है। यह अत्यन्त युक्तिपूर्ण है। और यह भी युक्तिसंगत है, कि मेरा दर्द मैं जितना अनुभव करता हूँ उससे अधिक मेरी माँ करती है। जब जीजस को सूली पर चढ़ाया गया, तब उनकी माँ के विषय में आप क्या कहेंगे? वह स्वयं महालक्ष्मी थीं, अति शक्ति सम्पन्न। अपने पुत्र को उन्होंने अपने जीवन का बलिदान करते देखा, मानव की भाँति कष्ट भोगते देखा। यह कितनी बड़ी बात है! अपने पुत्र को स्वयं की बलि देते देखा जब कि यह सब समाप्त कर देने की सारी शक्तियाँ उनके हाथ में थीं। किन्तु यह एक बड़ा नाजुक काम था, इस आज्ञा चक्र को निर्माण करने का।

इसका क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ है उसकी श्रद्धा में कुछ कमी थी? इसके विपरीत, उनको (माँ को) उन पर इतना विश्वास था कि वह (माँ) उनसे ऐसा करने को कह सकती थी।

जब माँ से अपना कुछ काम करवाना चाहते हैं तो कुछ लोग कहते हैं, 'माँ, मैं ये शोध-निबंध दे रहा हूँ। मुझे सफलता देना।' 'अच्छा बंधन दो,' और आप सफल हो जाते हैं। 'माँ, मैं यह खोज करने की कोशिश कर रहा हूँ।' 'अच्छा, तथास्तु।' 'माँ, मैं यह रोजगार पाना चाहता हूँ।' 'तथास्तु!' यह विपरीत क्रम है।

कितनों में जीजस जैसा समर्पण है? किसी में नहीं। यह सत्य है। वह सबसे बड़ा भाई क्यों हैं? क्योंकि उसके समान कोई नहीं है। उसने वह सब दर्दनाक कष्ट सहन किये, क्योंकि वह अपनी माँ के अभिन्न अंग थे। उससे (पुत्र) उन्होंने (माँ) बहुत अधिक कष्ट भोग किया। वह भी उस वेदना में से गुजरी-एक अधिक महान ध्येय, अधिक आनन्द, अधिक महान, अधिक ऊँचे जीवन के लिए। यह सच्चा समर्पण है।

किन्तु ये छली लोग इसका लाभ उठा सकते हैं। जब वे लोगों को यातना देते हैं तो कहते हैं आखिर आपको कष्ट भोगने हैं। देखिये वे कैसी बात बनाते हैं। वे कहते हैं आपको कष्ट भोगना आवश्यक है क्योंकि अन्यथा आपका कार्य नहीं हो सकता। अत: कष्ट भोगना आवश्यक है।

यह अत्यन्त सूक्ष्म समझने वाली बात है, अत्यन्त सूक्ष्म। आपको इससे स्पष्ट हो जायेगा कि पहले आपका पोषण किया जाता है, आपको ऊपर उठाया जाता है, आपका प्रशिक्षण होता है, आपको सही किया जाता है। और उसके पश्चात आप जो कुछ करते हैं-कष्ट सहन आदि आपके लिये कष्ट नहीं रह जाते क्योंकि आपका 'आत्मा' में रूपान्तर हो गया है :

नैनं छिदन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो, न शोषयति मारुतः।।

इसे (आत्मा) किसी शस्त्र द्वारा मारा नहीं जा सकता, हवा इसे फेंक नहीं सकती अथवा उड़ा नहीं सकती, अग्नि इसे जला नहीं सकती। इसे किसी तरह नष्ट नहीं किया जा सकता।

आप अब ऐसी आत्मा हैं। अतः आपका पोषण कार्य हो चुका है, आप बड़े हो गये हैं, पुष्ट हैं। जब लोग सहजयोगियों को देखते हैं तो कहते हैं, ये कैसे फूलों जैसे हैं। इनके चेहरे चमकते हैं। कैसे आत्मविश्वासयुक्त, कितने सम्भ्रान्त, कैसे सुन्दर! किन्तु यह सब किसलिए? इसलिए कि आप परमात्मा के रथ के पहिये बनें। आपको सारा भार उठा है और आत्मबलिदान - जो आपके लिये अब बलिदान नहीं रहा। क्योंकि 'आत्मा' (अब आप आत्मा में परिणत हो चुके हैं) केवल देता है, कभी खोता नहीं। 'देना' इसका गुण है। अतः आप कुछ खोते नहीं, आप केवल देते हैं।

माँ पहले प्रसव की पीड़ा सहती है। ठीक है। सब तरह के कष्ट सहती है। ठीक है। किन्तु जब बच्चा बड़ा हो जाता है, तो वह माँ के साथ खड़ा होता है, उसको सहारा देता है, गौरवशाली पुत्र बनता है। उसका (पुत्र का) वह (माँ) अभिमान अनुभव करती है। पुत्र का माँ को अभिमान है और माँ का पुत्र को अभिमान है। वे एक साथ खड़े होते हैं और एक साथ लड़ाई लड़ते हैं। यह तभी सम्भव होता है जब आप पूर्ण समर्पण और एक सहजयोगी के भावी जीवन की तैयारी के लिये आगे आयें-ऐसा जीवन जो बाहर से एक संग्राम सा दिखता है, किन्तु भीतर अत्यन्त कृतार्थकारी है। एक समय था जब मेरे पास जो सहजयोगी आते थे उनके लिये धरती पर बैठना भी एक बहुत बड़ी बात थी। इसी भाँति जूते उतार कर बैठना एक बड़ा त्याग था। कल कार्यक्रम में तीन व्यक्ति जूते उतार कर बैठने की बात पर उठ कर चले गये, जैसे कोई उन्हें गंजा कर रहा हो।

किन्तु सहजयोग में क्यों ऊँचे उठना, बढ़ना, खड़े होना, एक महान माँ की महान सन्तान के रूप में। काम महान है, दुर्दान्त है। यह ऐसे-वैसे, मंझोले लोगों के करने का काम नहीं है। पिचके गालों वाले, डरपोक, अहंकारी भीरु इसे नहीं कर सकते। उनमें आवश्यक वीरत्व नहीं है।

अतः ध्यान में समर्पण, ध्यान में पूर्ण समर्पण का अभ्यास करना चाहिये। अब यह तुम्हारे अपने तथाकथित संकुचित अपने हित के लिये तुम नहीं कर रहे हो। पहले तुम एक नन्हें शिशु थे-बालक। अब आप एक समग्र पुरूष हैं। अतः अब आप अपने लिये कुछ भी नहीं करते, तो उस समग्र पुरुष के लिये करते हैं। आप उस समय की चेतना में उतरने के लिये ऊँचे उठ रहे हैं जो आप बनने के पथ पर

हैं। आपका काम, आपका रुपया, आपकी पत्नी, आपके पति, बच्चे, पिता, माता, रिश्तेदार - ये सब बातें अब समाप्त हैं। अब आप सबको सहजयोग का कार्यभार संभालना है। आपमें से प्रत्येक पूर्ण सक्षम हैं। आपको उसके लिये तैयार किया गया है। आप जिस प्रकार उचित समझें, आपकी जैसी भी क्षमताएं हों, वैसे करें। बस आपका पूर्ण समर्पण काम करेगा। समर्पण ही सार है। पूर्ण समर्पण द्वारा ही आप और ऊँचे उठ सकते हैं।

कुछ सहजयोगी हैं जो अधपके हैं। उन्हें हम छोड़ दें। उन्हें हम अपने साथ नहीं रक सकते। उनके प्रति आप सहानुभूति न रखें। वे बेकार हैं। यदि वे ठीक सिद्ध हुए तो हम उन्हें दुबारा अपने साथ ले लेंगे। किन्तु यह काम मुझ पर छोड़ दें। आप उनकी ओर अपना ध्यान अथवा प्रयत्न न करें। आपको ऊँचा उठना है। आप साधक थे, तभी आपको यह मिला है, आपने उन्नति की है, आप ऊँचे उठे हैं। यह किसलिए? इसलिए कि आप खड़े हों। जैसे मैं आज आपके सामने खड़ी हूँ, आपको दूसरों के सामने खड़ा होना है, सर्वसाधारण के सामने खड़ा होना है।

समर्पण का अर्थ यह नहीं कि आप सहजयोग की चर्चा न करें। बहुत लोग सोचते हैं, शान्त, चुपचाप रहना ही समर्पण है। केवल ध्यान में शान्त रहना चाहिये। किन्तु बाद में तो उस स्थिति से बाहर आना होता है।

सारे राष्ट्रों और सारे लोगों से यह महान संदेश कह दो कि पुनरुत्थान का समय आ गया है, अभी, इसी समय और आप सब यह कार्य करने के योग्य हैं। यदि इसके लिए कोई आपका मज़ाक उड़ाता है, तो उसे समझदारी और बुद्धिमानी से बातें बताओ। व्यक्तिगत रुचियों, अरुचियों को त्यागना चाहिये। 'मैं ये पसन्द करता हूँ, मैं वह पसन्द करता हूँ।' ऐसी बातें छोड़ देनी चाहिये। इसका अर्थ यह नहीं आप मशीन की भाँति हो जायें, नहीं। किन्तु यह 'मैं' की दासता को छोड़ना चाहिये। आदतों की दासता समाप्त होनी चाहिये। आपको आश्चर्य होगा, आपमें समर्पण जागृत होने पर आप अधिक नहीं खायेंगे, कभी कभी आप बिल्कुल नहीं खायेंगे, खाने की बात ध्यान रहना भी जरूरी नहीं। आपको ध्यान नहीं रहेगा आपने क्या खाया, आप कहाँ सोये, कैसे सोये यह भी आपको ध्यान नहीं रहेगा। यह एक दूरबीन जैसी जिन्दगी होगी, फैलती हुई। आप अपने सपने सृजन करेंगे, उन्हें पूर्ण करेंगे, क्रियान्वित करेंगे। आप ऐसे सरल, साधारण व्यक्ति दिखते हैं, किन्तु आप ऐसे नहीं हैं। समर्पण में, पूर्ण समर्पण में अब आपको यह कार्य करना है, आपने निजी हित, अपनी निजी उपलब्धि के लिए नहीं, वह तो समाप्त हो चुकी है। यह करना है, दलदल से पूरे बाहर निकलने के लिए, धरती पर खड़े होकर परम पिता परमेश्वर की ऊँचे स्वर में स्तुति गान करने के लिये। जो

दलदल में फँसे हैं वे क्या संगीत दे सकते हैं? क्या गाना गा सकते हैं? क्या सुरक्षा दे सकते हैं? क्या दूसरों की सहायता कर सकते हैं? आपको उससे पूरा बाहर निकलना है। उसके लिये सुदृढ़ बुद्धिमत्ता चाहिये, स्थिर, प्रत्येक क्षण। उसके लिए अपने बांये पार्श्व (इड़ा नाड़ी) अथवा दांये पार्श्व (पिंगला नाड़ी) को दोष देने की आवश्यकता नहीं। बिल्कुल नहीं। आप बस बाहर निकल आयें। इसे मजबुती से पकड़ लें। आपकी देखभाल करने के लिये परब्रह्म आये हैं। इनको पकड़े रहें। मृत्यु को भी वापस जाना होगा। फिर इन छोटी-छोटी बातों की क्या गिनती?

अब आपकी माँ का नाम बड़ा शक्तिशाली है। आपको पता होना चाहिये, यह अन्य सब नामों से शक्तिशाली है। सबसे शक्तिशाली मन्त्र है। किन्तु आपको जानना चाहिये इसे कैसे उच्चारण करना चाहिये। अन्य किसी नाम जैसे नहीं। आप जानते हैं भारत में जब लोग अपने गुरु का नाम लेते हैं तो अपने कान पकड़ते हैं। इसका अर्थ है कि यह नाम उच्चारण करते समय यदि मैं कोई भूल चूक कर रहा हूँ, तो कृपया क्षमा करें। यह अत्यन्त शक्तिशाली मन्त्र है। केवल आपको समर्पण की जरूरत है- समर्पण का बारूद।

आज मैंने कहा, 'इंग्लैण्ड में अब डेज़ी फूलों में सुगंध होती है।' उस महिला को विश्वास नहीं हुआ। वह बोली, 'मैंने तो ऐसा कभी नहीं देखा। इसके विपरीत मेरा तो अनुभव है डेज़ी में कोई सुगंध नहीं होती और वे अजीब गंध के फूल होते हैं।' मैंने कहा, 'अच्छा, ये डेज़ी तुम लो, इनको सूंघ कर देखो।' जब उसने उन्हें सूँघा तो वह चकित रह गई। आश्चर्य! कैसा सूक्ष्म! आज वे इंग्लैण्ड में सबसे अधिक सुगंध वाले फूल हैं। केवल नाम, जिसका अर्थ है, निष्कलंक, अर्थात निर्मल, मतलब बिल्कुल मलशून्य, स्वच्छ। यह मल क्या है? यह दलदल है। दलदल से मुक्त, निः अर्थात् पूर्णता। बहुत पहले से सहस्रार के आनन्द को निरानन्द कहते हैं। प्राचीन काल से इसे निरानन्द या निर्मला आनन्द कहा जाता है। बहुत लोग इसे निर्मला आनन्द या निरानन्द कहते हैं। यह आनन्द वह आनन्द है, जो आप सूली पर चढ़ते समय भी अनुभव करते हैं। यह आनन्द वह आनन्द है, जो आप, जब आपको विष दिया जाता है उस समय भी अनुभव करते हैं। अपनी मृत्युशय्या पर लेटे भी आप उस आनन्द का अनुभव करते हैं। वह आनन्द है निरानन्द।

अतः दूसरे चरण के लिये तैयार हो जाओ। आप मोर्चे पर हैं। मुझे बहुत कम समय चाहिये। किन्तु मुझे दृढ़ बुद्धिमत्ता और समर्पण वाले लोग चाहिये। दृढ़, जो एक क्षण के लिये भी इधर या उधर विचलित न हों। अब हम तेजी से प्रगति कर सकते हैं और लड़ाई लड़ने के लिये आगे बढ़ सकते हैं। शायद अब आप असद्प्रवृत्तियों की सूक्ष्मताओं से परिचित हो गये हैं। कैसे वे अपनी शक्ति

जो निस्सन्देह सीमित है, परमात्मा के कार्य को नष्ट करने में उपयोग करती हैं। और कैसे आपको सचेत, सुसज्जित और समर्पित रहना है। यह बात मैं केवल आपसे बता सकती हूँ। यह मैं कैक्स्टन हॉल में आने वाले सर्वसाधारण लोगों को नहीं बता सकती। उनमें से कुछ अधपके होते हैं, कुछ बिल्कुल नये, भोले से, और कुछ बिल्कुल बेकार। किन्तु यहाँ आज जो आप मेरे सामने उपस्थित हैं, मैं आपसे बहुत स्पष्ट बताना चाहती हूँ, जैसा कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'सर्वधर्माणां परित्यज्यं, मामेकं शरणं व्रज।' इसके अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। 'ब्रज' माने जिसने दूसरी बार जन्म लिया है। एक ठोस व्यक्तित्व, एक ठोस पदार्थ की भाँति। जब आप ठोस होंगे, तभी आपका समर्पण होना चाहिये। जब आप पक्के, परिपक्व है तभी आपको समर्पण करना चाहिये।

यह आपको दलदल से बाहर निकलने में सहायक होगा और तब यह उस महान कार्य में सहायक होगा। कोई नहीं समझता माँ क्यों मेरी सहायता करने की कोशिश कर रही हैं। वे समझते हैं माँ बड़ी उदार हैं। किन्तु ऐसी बात नहीं। मैं बहुत समझदारी रखती हूँ। क्योंकि आप ही वह लोग हैं, जो ईश्वरीय आनन्द को इस पृथ्वी पर चरितार्थ करने में समर्थ हैं। आप वह बांसुरी हैं जो परमात्मा का संगीत गान करेगी। परमात्मा आपका उपयोग करेंगे और अपनी इच्छानुसार घुमायेंगे, फिरायेंगे, कार्य करवायेंगे। मैं आपको पूर्ण सुयोग्य बनाने के लिये यह सब कर रही हूँ, जिससे आप परमात्मा के परम सुन्दर यन्त्र बन सकें, परमात्मा के सही यन्त्र बन सकें। मुझे पता नहीं कि आप समझते हैं कि वह जीवन कितना मधुर और सुन्दर होगा, समर्पण का जीवन, समझ के साथ, युक्ति संगत। पूर्ण समर्पित, समस्त पोषण अर्जन करने वाला और उसे अधिक ऊँचे उद्देश्य के लिये समर्पित करने वाला जैसे कुछ पत्ते सूर्य की किरणें खींचते हैं, अपने में रंग ग्रहण करते हैं, ऊँचे ध्येय के लिये कि जिससे बाद में वे मानव द्वारा उपयोग में लाये जा सकें। इस पृथ्वी पर इस पद्धति के विपरीत कोई कार्य नहीं होता। सब कुछ किसी उद्देश्य के लिये होता है, किसी नि:स्वार्थ, विस्तीर्ण, एक महान गतिशील उद्देश्य के लिये घटित होता है।

आप सागर बन जाते हैं, आप चन्द्रमा बन जाते हैं, आप सूर्य बन जाते हैं, आप पृथ्वी बन जाते हैं, आप आकाश बन जाते हैं और आप आत्मा बन जाते हैं। आप उन सबके लिये कार्य करते हैं। समस्त तारांगण और भूमंडल आप बन जाते हैं और उनका कार्य करने लगते हैं। ऐसी स्थिति है। क्योंकि आप उतर कर अपने तत्त्व पर आ बैठे हैं। उसी भांति आप प्रत्येक के तत्त्व पर उतर कर स्थित हो जाते हैं। किन्तु उस तत्त्व पर समर्पित हों, क्योंकि इन सबका मैं तत्त्व हूँ। मैं तत्त्व हूँ, तत्त्वमय हूँ। अपने तत्त्व पर स्थित रहें।

मैं कुण्डलिनी हूँ। मैं सार हूँ। एक स्थूल दिखने वाली। जो स्थूल रूप में बड़ी दिखती है, ऐसी वस्तु के प्रति समर्पण हमारी समझ में आ जाता है। किन्तु हम एक ऐसी वस्तु के प्रति समर्पण नहीं कर पाते तो इतनी सूक्ष्म, इतनी सूक्ष्म जो इतनी गहन है, इतनी गतिशील, इतनी विश्वव्यापी और इतनी सनातन है। उसको समर्पण करने की हम नहीं सोच सकते। हम उस आदमी के सामने समर्पण कर देते हैं, जो एक पर्वत जैसा भीमकाय दिखता है, जो पर्वत की तरह हम पर अत्याचार करने आता है, जो हिटलर जैसा दिखता है, जो झूठे, कपटी गुरु जैसा होता है। किन्तु अपने सूक्ष्म पुरुष को समर्पण करना, जिसे आप अपनी आँखों से नहीं देख सकते, जिसे सुन नहीं सकते, किन्तु जो वास्तव में विभक्त किये गये एटम बम की भाँति इतना शक्तिशाली है। विभक्त होने से पहले यह सब जगह रहता है। किन्तु सूक्ष्मता के चरम बिन्दु पर यह इतना गतिशील होता है कि जब आप इसे अपना लेते हैं तो यह ऊर्जा की ऐसी गतिमान शक्ति में परिणत हो जाता है। क्योंकि आपका चित्त विश्व के सूक्ष्म स्वरूप में पहुँच चुका है, अत: आप गहरे और अधिक गहरे उतरते जायें। धरती जो जड़ के निचले सिरे को पानी के उद्‌गम स्थल पर ले जाती है, उस उद्‌गम स्थल से अभिन्न है। आपकी कुण्डलिनी आदि कुण्डलिनी से अभिन्न है और इसकी शक्ति परब्रह्म है।

ये सब बातें आत्मसाक्षात्कार और परिपक्वता के बाद ही समझी जाती है। उससे पहले सम्भव नहीं। इसी कारण पिछले आठ साल ये सब बातें मैंने आपसे नहीं कहीं। मेरी आपके साथ बड़ी लुभानी और मीठी व्यवहार शैली थी। और मैं आपको ऐसा दिखाती थी कि जैसे आप मुझ पर उपकार कर रहे हैं यद्यपि इसमें आपका मुझ पर कोई उपकार नहीं है।

इन सब विचारों को पार कर आप अपनी 'आत्मा' बन गये हैं, तैयार, उत्तरदायी बनने के लिये, आपको जिस लिए बनाया गया वह भूमिका ग्रहण करने के लिए। जैसे जहाज बनाया जाता है, समुद्र पर लाया जाता है, उसका परीक्षण होता है और समुद्र में यात्रा के लिये उपयुक्तता देखी जाती है। अत: अब यह दुसरा चरण है जब आपको यात्रा कर प्रस्थान करना है, जब आपको जहाज का और समुद्र का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया है। पूर्ण स्वतन्त्रता और बुद्धिमानी से अब आपको अपनी यात्रा करनी है, तूफान, आंधी आदि से निर्भीक, क्योंकि अब आप पूर्ण ज्ञान रखते हैं। आपका काम है पार पहुँचना।

आपको अनन्त आशीर्वाद!

जगदम्बा ही आदिशक्ति

कबैला, २७/९/१९९२

सारा कार्य देवी का है। नौ बार वे अवतरित हुई और दसवीं बार तीनों शक्तियाँ सम्मिलित रूप में हैं इसलिए इन्हें त्रिगुणात्मिक कहते हैं। इसी कारण बुद्ध ने मैत्रया कहा - अर्थात् तीन माताएं।

गणित हमें अपने अन्दर से, परमात्मा से प्राप्त हुआ। हमने इसकी सृष्टि नहीं की। कुछ साक्षात्कारी गणितज्ञों ने इस सत्य की खोज की तथा अल्फा और ओमेगा (आदि और अन्त) का उपयोग किया। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि स्वस्तिक ओंकार बन जाता है तथा ओंकार अल्फा और ओमेगा बन जाता है। सहजयोग में हर चीज़ सुनिश्चित है तथा उसका सत्यापन किया जा सकता है।

आज आप दुर्गा या देवी के नौ रूपों की पूजा कर रहे हैं। देवी नौ बार पृथ्वी पर आई। देवी ने उन सभी लोगों से युद्ध किया जो साधकों का विनाश कर रहे थे तथा उनका जीवन दूभर कर रहे थे। सताए हुए इन महात्माओं ने देवी से प्रार्थना की। उन्होंने भगवती की पूजा की और आवश्यकतानुसार वे नौ बार अवतरित हुईं। हर बार उन्हें अहंकारी तथा निरंकुश लोगों का सामना करना पड़ा।

भारत में जब हम किसी व्यक्ति की जन्मपत्री देखते हैं, तो पता चलता है, कि लोगों की तीन श्रेणियाँ होती हैं। पहले देव, दूसरे मानव और तीसरे राक्षस। मेरे विचार में आप सब लोग मुझे देवगणों से मिले हो क्योंकि इसके बिना आप सहजयोग को इतनी गम्भीरतापूर्वक न लेते। कुण्डलिनी को उठाते हुए यदि आपको मध्य हृदय पर बाधा जान पड़ती है, तो आप जगदम्बा का मन्त्र लेते हैं। मध्य हृदय की बाधा दूर करते हुए मुझे भी कहना पड़ता है कि, 'मैं ही साक्षात जगदम्बा हूँ', तब आपमें जगदम्बा जागृत होती हैं। आपने वैज्ञानिकों से भी अधिक सत्यापन कर लिया है। वैज्ञानिक बाहर को जा रहे हैं तथा परिणाम से परे हैं। समस्या के आधार तथा हल को जाने बिना वे समस्या का हल खोजते हैं।

आपकी कुण्डलिनी आपके अन्दर आदिशक्ति का प्रतिबिम्ब है। भिन्न चक्रों में से गुजरती हुई कुण्डलिनी इन चक्रों को शक्ति देती है क्योंकि वे ही शक्ति हैं। वे ही सदाशिव की दैवी शक्ति हैं। वे सदाशिव की पूर्ण शक्ति है। जब वे सभी चक्रों को शक्ति प्रदान करती हैं, तो चक्र प्रकाशित होते हैं तथा सभी देवता जागृत होते हैं। वे जगदम्बा हैं तथा शुद्ध शक्ति के रूप में वे त्रिकोणाकार अस्थि में रहती हैं। पर जगदम्बा रूप में उनका निवास हृदय में है। हृदय चक्र अति महत्त्वपूर्ण है। बारह वर्ष की आयु तक यह शिशु में गणों की उत्पत्ति करता है। गण बायीं ओर कार्य करते हैं। सेंट माइकल उनके नेता हैं पर श्रीगणेश उनके सम्राट हैं। पहले घटस्थापना अर्थात् त्रिकोणाकार अस्थि का सृजन होता है। देवी का पहला कार्य मूलाधार की स्थापना है। उन्होंने आपकी पवित्रता स्थापित की। पहला कार्य कुण्डलिनी को त्रिकोणाकार अस्थि में स्थापित करना है और फिर श्रीगणेश को स्थापित करना।

जिस चीज़ की सृष्टि वे करती हैं वह अबोधिता से परिपूर्ण होनी चाहिए। उदाहरणतया पत्थर अबोध हैं, जब तक आप इन्हें फेंके नहीं ये चोट नहीं पहुँचाते। नदियाँ अबोध हैं। सारे पदार्थ अबोध हैं। न ये चालाक हैं न आक्रामक। वे परमात्मा के पाश में हैं। अपनी इच्छा से वे कुछ नहीं कर सकते। कुछ पशुओं के अतिरिक्त बाकी सब अबोध होते हैं। वे परमात्मा के पाश में बंधे हैं। एक शेर, शेर की तरह व्यवहार करता है और सांप, सांप की तरह; पर मनुष्य सांप की तरह भी आचरण करते हैं और शेर की तरह भी। उनमें स्थिरता नहीं है। पशुओं के होने का भी एक प्रयोजन है। यह प्रयोजन है विकास के प्रतीक मानव की सहायता करना। आदिशक्ति ने इन सब चीज़ों की सृष्टि आपके लिए की है ताकि आप आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर सकें, अपने जीवन का अर्थ पा सकें, सर्वव्यापक शक्ति से जुड़ कर परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर सकें। सारा कार्य देवी का है। नौ बार वे अवतरित हुई और दसवीं बार तीनों शक्तियाँ सम्मिलित रूप में हैं इसलिए इन्हें त्रिगुणात्मिक कहते हैं। इसी कारण बुद्ध ने मैत्रया कहा - अर्थात् तीन माताएं।

यह शक्ति जब कार्य करने लगती है, तो तीनों मार्ग तथा सातों चक्र इनके वश में होते हैं। शक्ति का नाम लिए बिना आप कुछ प्राप्त नहीं कर सकते। यहाँ पर मानव असफल हो जाता है क्योंकि वह स्वतंत्र है, क्यों किसी की आज्ञा माने, बात सुने या किसी को स्वीकार करे। यही कारण है कि साक्षात्कार प्राप्त होने के बावजूद भी कार्य अति कठिन है। आपको किसी ऐसी बात की आदत नहीं जिसमें आप अपनी स्वतंत्रता का उपयोग न कर सकें।

अब परम-चैतन्य में यही शक्ति जागृत हो चुकी है और चमत्कारिक कार्य कर रही है। आप इन्हें स्पष्ट देख सकते हैं। आपने मेरे फोटो देखे हैं। सत्य के विषय में आपको विश्वास दिलाने के लिए परम-चैतन्य निरन्तर कार्य कर रहा है। ईसा के समय यदि यह इतना कार्यशील होता तो अच्छा होता, पर यह इसी समय होना था क्योंकि इस समय मनुष्य का संचालन अति कठिन है। उन्हें स्वतंत्रता दे दी गई है। आदम और ईव को भी स्वतंत्रता दे दी गई थी। पर यह स्वतंत्रता किस प्रकार प्राप्त की गई? आदम और ईव पशु सम थे, पूर्णतया परमात्मा के पाश में। ईडन बाग में नंगे रहते थे और पशुओं की तरह रहने तथा खाने के अतिरिक्त कुछ न जानते थे। तब शक्ति स्वयं सर्प रूप धारण करके उनके पास गई तथा उन्हें बताया कि ज्ञान रूपी फल चख लो। शक्ति उनका विकास चाहती थी। शक्ति जानती थी कि वे बहुत से चमत्कार कर सकती है तथा मनुष्यों को ज्ञान समझा सकती है। अत: उन्होंने कहा कि आप ज्ञान के इस फल को खाओ। तब मानव की एक नई जाति आरम्भ हुई जो ज्ञान को जानना चाहती थी। आदिशक्ति ने अन्य उच्च सृष्टियाँ भी कीं। उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश की सृष्टि की

और उनके लोक भी बनाए। इसी में योजना बना दी गई कि किस प्रकार इन पशुओं को विकसित कर हम साक्षात्कारी बना सकते हैं। पशुओं से मानव और मानव से साक्षात्कारी। यह बहुत बड़ी समस्या थी। बाद में मानव में तीन मार्गों की सृष्टि की गई। इन तीन मार्गों से तीन शक्तियों महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती की उत्पत्ति हुई। उन्होंने मानव में शक्ति को कार्यान्वित करना पसन्द किया।

भारत में पहला कार्य अति प्रभावशाली था। उन्होंने भारत को चुना। यहाँ छः ऋतुएं हैं और जलवायु बहुत अच्छी हैं। सारी ऋतुएं सन्तुलित हैं। परम-चैतन्य को ऋतंभरा प्रज्ञा भी कहा जाता है अर्थात् ऋतुएं बनाने वाला का ज्ञान । पश्चिम में ऋतम्भरा प्रज्ञा प्रभावशाली नहीं है। मनुष्य इतने विचलित मस्तिष्क हैं कि प्रकृति भी वैसी ही हो गई है और नहीं समझ पाती कि ऐसे मनुष्यों से किस प्रकार व्यवहार करें।

मनुष्यों को समझाया गया कि परमात्मा हैं। वास्तविक सन्तों का सम्मान हुआ तथा उन्होंने भिन्न निचोड़ निकाले। मैंने जब आदि शंकराचार्य को पढ़ा तो हैरान हुई कि वे किस प्रकार मेरे बारे में इतना कुछ जानते हैं। वे जानते हैं कि मेरे घुटने कैसे लगते हैं, और मेरी पीठ पर कितनी लकीरें हैं। इसका अर्थ है कि अपनी ध्यान शक्ति से वे सब देख सके। उन्होंने मुझे कभी नहीं देखा। उनका वर्णन बिल्कुल स्पष्ट है। देवी के सहस्रनाम इतने संक्षिप्त हैं। आप उन्हें मुझ में देख सकते हैं और यह वास्तविकता है। इन सन्तों का ज्ञान प्रशंसनीय है - उन्होंने कैसे जाना कि देवी ऐसी हैं। भारत में ध्यान शक्ति महान थी। इसका कारण हमारी ऋतुएं अनुशासित थीं। भारत में लोग प्रातः उठकर स्नान करते हैं, पूजा करते हैं और अपने काम पर जाते हैं। सायंकाल अपने परिवार के साथ रहते हैं, भजन आदि करके सोते हैं। वे छुट्टियाँ मनाने नहीं जाते और न वे मद्यपान में फंसते हैं। मद्यपान करने वाले को घर से बाहर कर दिया जाता है, उसे घृणित समझा जाता है। उसे शराबी कहा जाता है।

ऋतुएं अनुशासित होने के कारण हम जानते हैं कि हमें कब, कैसे और क्या करना है। भारत में लोग जंगलों में रहते थे क्योंकि वे आराम को जानते ही न थे। सादी झोपड़ी में सूर्य तथा वर्षा से सुरक्षित होकर वे लोग रह सकते थे। उनकी आवश्यकता बहुत कम थी। पर अब तो बहुत अन्तर आ गया है। मुझे देखने को मिलता है। सादे जीवन के लिए आपको धरा-माँ से सारा वैभव नहीं निकालना पड़ता। पर्यावरण संबंधी समस्याएं नहीं होती। उनके अन्दर कार्यरत यह शक्ति उन्हें साधक बनाने के लिए थी। उनके पास खाने को भोजन तथा सोने के लिए स्थान था। बिना अधिक कार्य किए प्रसन्नतापूर्वक रहते थे। समय की कमी न थी। न वे तैरने जाते थे न बालरूम डांस करते। समय

पर वे ध्यान करते थे। वे महसूस करने लगे कि परमात्मा की शक्ति क्या है? देवत्व क्या है? और परमात्मा क्या है? पश्चिम में लोग ईसा के निजी जीवन की बात कर सकते हैं। भारत में कोई ऐसा नहीं करता। आप परमात्मा के बारे में कैसे जान सकते हैं। आप उनके माध्यम से आए हैं। परमात्मा कुछ भी कर सकते हैं। आप परमात्मा को कैसे समझ सकते हैं? आप परमात्मा से जुड़ सकते हैं, उनका सामीप्य पा सकते हैं, उनसे आशीर्वादित हो सकते हैं तथा उनकी रक्षा में रह सकते हैं। परमात्मा के बारे में आप बहुत सी बातें जान सकते हैं पर आप उन्हें समझ नहीं सकते। आप ये नहीं पूछ सकते कि उन्होंने स्वस्तिक या ओंकार क्यों बनाए। वे तो परमात्मा से पूछते हैं कि आप क्यों हैं। इस अहंकार ने हमें परमात्मा के प्रति अन्धा कर दिया है। हम अपना अन्त नहीं सोचते। हमारी अपनी धारणाएं हैं।

यह शक्ति जिसने आपको आत्मसाक्षात्कार दिया है यह आपको मोक्ष भी देगी पर फिर भी आप परमात्मा को समझ न सकेंगे। मान लीजिए कोई व्यक्ति कबैला में पहाड़ी के नीचे खड़ा है तो क्या वह मेरे घर को ठीक से देख पाएगा? मेरे घर को देखने के लिए उसे कबैला से ऊपर जाना पड़ेगा।

जिस स्रोत से हम उपजे हैं, उस स्रोत को हम नहीं जान सकते। हम नहीं समझ सकते, क्यों? क्योंकि हम परमात्मा की इच्छा है। अत: हमें परमात्मा की इच्छा में प्रसन्न रहना चाहिए। आपके अन्दर की शक्ति अम्बा है, यही इच्छा शक्ति है। उसकी इच्छा है, कि आप परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करें। उसके साम्राज्य में प्रवेश करने के बाद यह शक्ति आपको भिन्न सुन्दर अवस्थाओं में बिठाती हैं। इनमें से कुछ परमात्मा के हृदय में और कुछ परमात्मा के सहस्रार में बैठने की अवस्थाएं हैं।

अब आप अपनी शक्तियों को धारण कीजिए क्योंकि आप सीमा पार कर चुके हैं और अब हम दसवीं अवस्था में हैं। विश्वास करें कि आप सहजयोगी हैं। विश्वास करें कि आप परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर चुके हैं। आप परमात्मा का निर्णय नहीं कर सकते। पर जब आप वहाँ बैठते हैं तो यह कोई सभा नहीं होती। आप परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर चुके हैं, परमात्मा का आशीर्वाद, सुरक्षा, पोषण पा चुके हैं तथा उन्होंने आपको ज्ञान भी दिया है। पर अभी भी इस अहंकार को नीचा जाना है। हमारे लिए नम्रता अति आवश्यक है, नहीं तो यह शक्ति आपको आगे नहीं ले जा सकती। अब इसने सहस्रार को पार कर लिया है और इसे ऊँचा जाना है। इसके लिए आपको नम्र होना होगा। अभी बनावटी नम्रता है। वह नम्रता तो आपको हृदय में है। आइए स्वयं को जानें। तब आप हैरान होंगे कि परमात्मा ने आपको अपने ही रूप में बनाया है। उसने आपको बनाया है, आप उसे नहीं बना सकते। वह स्रोत है। अब आप अन्य लोगों को उनके रूप में बनाएं। ये शक्तियाँ आपके

अन्दर हैं। सर्वप्रथम आप स्वयं को अनुशासित कीजिए जो लोग स्वयं को वश में नहीं कर सकते वे दूसरों को क्या वश में करेंगे। आप पहले स्वयं को सम्भालिए क्योंकि अब आप परमात्मा के साम्राज्य में हैं। आप में गरिमा, स्नेह, करुणा, प्रेम तथा समर्पण होना चाहिए। इसके बिना यह शक्ति बेकार है क्योंकि आप उस शक्ति के वाहन हैं। मान लो मुझे पानी चाहिए, मुझे एक खाली गिलास भी चाहिए। यदि यह गिलास पहले से ही अहं से भरा हुआ है तो इसमें क्या डाला जा सकता है? यदि आप पहले से ही अपने विचारों से परिपूर्ण हैं तेा आप अधिक ऊंचे नहीं उठ सकते। आपको पूर्ण समर्पित होना होगा। एक बार पूर्ण समर्पण करते ही आपकी सभी समस्याएं सुलझ जाएंगी। अपनी समस्याओं को भी समर्पित कर दीजिए। 'परमात्मा, आप ही इन समस्याओं को सुलझाइए।' आप ऐसा करें। यह इतनी संक्षिप्त, कार्यकुशल और प्रभावशाली शक्ति है, जो आपको प्रेम करती है, आपकी चिन्ता करती है और आपको क्षमा करती है। यह आप सब लोगों को सिंहासन पर बैठ अपनी शक्तियों का आनन्द लेते हुए देखना चाहती है। अत: हर आवश्यक कार्य अति सावधानीपूर्वक किया गया है।

नवरात्रि का दसवां दिन आप सबके लिए अत्याधिक महत्वपूर्ण है। यहाँ पर परम-चैतन्य गतिशील हुआ है। गतिशीलता से यह अति शक्तिशाली हो गया है। यदि कोई आप से दुर्व्यवहार करे या आपको परेशान करे तो भी आपको चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं, यह इसे सम्भाल लेंगे। आपके दुष्कर्मों का दंड भी आपको सामान्य लोगों के स्तर पर नहीं मिलेगा। सामान्य व्यक्ति पर अपराध का दोष लगाया जा सकता है। परन्तु यदि आप राज्य के उच्च पद पर उठ जाएंगे तो कोई आप पर दोष नहीं लगा सकता। आप कानून से ऊपर हैं। इसी प्रकार कोई भी आपको न छू सकता है न आपका नाश कर सकता है। कोई आपकी बढ़ोतरी को रोक नहीं सकता, मुझे कोई हानि नहीं पहुँचा सकता। कोई राक्षस मुझे हानि नहीं पहुँचा सकता, कभी किसी ने हानि नही पहुँचाई। पर आप लोग मुझे हानि पहुँचा सकते हैं। इस जीवन में मैंने आपको अपने शरीर में लिया है और अपने शरीर में ही मैं आपका शुद्धिकरण कर रही हूँ। यह कठिन कार्य है। आरम्भ में यह शक्ति आदम और ईव के पास गई और उन्हें बताया कि वे ज्ञान प्राप्त करें। अत: वह वचन पूर्ण करना ही होगा।

पश्चिम के लोगों को यह समझाना कठिन है कि वे विराट के अंग-प्रत्यंग हैं। वे बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। बिना किसी लक्ष्य के वे कहते हैं कि हम खोज रहे हैं। हमें अधिक से अधिक लोगों को बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। जो नहीं आना चाहते उनकी कोई आवश्यकता नहीं। उन्हें नम्रतापूर्वक इसकी याचना करनी होगी। आपके पास ज्ञान है। इस ज्ञान से ही आपकी पहचान होनी

चाहिए। समझ लीजिए कि आपके पास ज्ञान है और यह ज्ञान दूसरों को दिया जा सकता है तथा आदिशक्ति का स्वप्न साकार करने के लिए हम विश्व को एक सुन्दर विश्व में परिवर्तित कर सकते हैं। आदिशक्ति ने आपकी सृष्टि इसी कार्य के लिए की है और इसी के लिए आपको मानव स्तर से उठाकर महा मानव स्तर पर लाई। आज यदि आप जगदम्बा के रूप में मेरी पूजा कर रहे हैं तो याद रखिए कि जगदम्बा ही आदिशक्ति है।

छोटी-छोटी बातों पर अपनी शक्ति बर्बाद मत कीजिए। विचार कीजिए कि आपको ध्यान करना है तथा ऊपर उठना है और अन्य लोगों को जागृति देनी है। यदि आप स्वयं को प्रेम करते हैं तो कहें मेरा शरीर और मस्तिष्क परमात्मा ने मुझे दिया है, यह कितना सुन्दर है। परमात्मा इसका उपयोग भी महान कार्य के लिए करेंगे। आपको ढाल कर इस अवस्था तक लाया गया है। अपनी स्वतंत्रता मे आपको उत्थित होकर समझना होगा कि क्या करना चाहिए और कैसे उस अवस्था को पाया जाए। प्रकृति की कोई स्वतंत्र इच्छा नहीं है परन्तु जब परमात्मा प्रक्रिया करते हैं तो विपत्ति आती है और इनसे लोगों की मृत्यु होती है।

सामूहिकता

हमारे उत्थान का मूलाधार

मैलबोर्न, १०/४/१९९१

विराट आदि-पिता हैं, जो हमारे मस्तिष्क में हैं और हमारी सामूहिकता के लिए कार्य करते हैं। जागृति के पश्चात् कुण्डलिनी तालु-अस्थि को भेदती ही है और उससे पूर्व यह सहस्रार में प्रवेश करती है। सहस्रार क्षेत्र १००० नाड़ियों से घिरा हुआ है तथा डाक्टरी भाषा में इसे लिम्बिक क्षेत्र कहते हैं। यह १००० नाड़ियाँ विशुद्धि चक्र की सोलह महत्त्वपूर्ण नाड़ियों से जुड़ी हुई हैं। इसी कारण कहा जाता है कि श्रीकृष्ण की १६००० पत्नियाँ थीं। उनकी सारी शक्तियाँ पत्नियों के रूप में थीं और मेरी सारी शक्तियाँ बच्चों के रूप में हैं।

उत्थान की ओर विकसित होते हुए हमें अपने सहस्रार पर जाना पड़ता है। आज के सहजयोग से सामूहिकता इतनी जुड़ी हुई है। इससे पूर्व यह केवल आज्ञा चक्र के स्तर तक थी। सहस्रार पर पहुंच कर कुण्डलिनी सारी नाड़ियों को प्रकाशित करती है और नाड़ियां शांत एवं सुन्दर दीपों के समान दिखाई पड़ती हैं। इन नाड़ियों का दृश्य इतना सुन्दर तथा शान्तिदायक होता है कि इससे अच्छा दृश्य मनुष्य पूरे विश्व में कहीं नहीं देख सकता। सामूहिकता तक पहुंच पाने के लिए सहस्रार को खोलने से पूर्व मुझे सामूहिकता पर अपना चित्त डालना पड़ा। मुझे लोगों को उनकी समस्याओं को, उनके परिवर्तन क्रम तथा संयोगों को, जिनके कारण वे दु:खी हैं, देखना पड़ा। उन सबको सात मुख्य भागों में बांटा जा सकता है, परन्तु वे २१ भागों में बंटे हैं। एक बायां, एक दायां और एक मध्य। इस प्रकार हमारी २१ मूलभूत समस्याएं हैं जिनका हल हमने खोजना है। सहजयोग के प्रारंभ में मैंने मुख्य तथा लोगों के शारीरिक, मानसिक और आर्थिक समस्याओं का निवारण करने का प्रयत्न किया। बीच-बीच कईं दुर्घटनाएं भी हुई। आप जानते ही हैं जब वे आज्ञा पर पहुंचे तो उन्होंने सारे वातावरण को एक प्रकार की सत्ता के रूप में लेना शुरू कर दिया। यह परमात्मा की सत्ता न थी। परिणामस्वरूप बहुत से लोग आज्ञा पर ही सहजयोग से बाहर चले गये। परन्तु जो लोग सहस्रार पर पहुंच गए हैं उन्हें समझना है कि सामूहिकता हमारे उत्थान का मूलाधार है। यदि आप ध्यान केन्द्र पर नहीं आते हैं, यदि आप सामूहिक नहीं हैं, यदि आप परस्पर मिलते-जुलते नहीं तो आप अंगुली से कटे हुए नाखुन की तरह हैं और परमात्मा को आपसे कुछ नहीं लेना देना। पेड़ से गिरे हुए फूल जिस तरह थोड़ी देर में मर जाते हैं, वही अवस्था आपकी है। सामूहिकता स्थापित न होने की अवस्था में सहजयोग समाप्त हो जायेगा।

सामूहिकता के बिना हम जीवित नहीं रह सकते। जिस तरह शरीर का मस्तिष्क से संबंध आवश्यक है, उसी प्रकार सामूहिकता के बगैर सहजयोगी जीवित नहीं रह सकते। अन्दर-बाहर सामूहिकता स्थापित होनी चाहिए। बाहर से कहीं अधिक आपको अपने अन्दर स्थापित होना है। अन्तस में जो है वही बाहर प्रकट होता है।

अपने अन्दर सामूहिकता को स्थापित करने के लिए सबसे पहले हमें अन्तर्दर्शन करना है कि हम अपने मस्तिष्क में सामूहिकता विरोधी क्या कर रहे हैं। हमारा मस्तिष्क किस प्रकार कार्य कर रहा है। भारत में, आपसे परिचित होते ही, लोग फौरन पता लगायेंगे कि किस व्यक्ति से क्या कार्य करवाया जा सकता है। यदि कोई किसी मंत्री का भाई है, तो फौरन उसके घर पहुंच कर कहेंगे, 'क्या

आप मेरा यह कार्य करेंगे?' आप उनसे भी आगे जा सकते हैं। किसी से परिचित होते आपको नहीं सोचना चाहिए कि इसके साथ मैं क्या व्यापार कर सकता हूँ। किसी के पास यदि धन है, तो लोग उससे मिलकर व्यापार करना चाहेंगे। या वे उस व्यक्ति का प्रयोग अपने कार्यों के लिए करने लगेंगे। इसके विपरीत, आप ज्योंही किसी से मिलें तो देखें कि उसमें कौन सा गुण है और इसे मैं कैसे ग्रहण कर सकता हूँ। हम यहाँ अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए हैं, अत: आपको सोचना चाहिए कि दूसरों की अच्छाई को अपने अन्दर कैसे उतारें। दुर्गुणों से आपका पोषण न होगा। अत: आप दूसरों के दुर्गुणों को देखने के स्थान पर उनके गुण खोजेंगे। यदि किसी में बुराइयाँ भी हैं तो उसके विषय में सोचना व्यर्थ है क्योंकि वे सुधरने वाले नहीं हैं। यह किसी और की समस्या है। श्रद्धा, सूझबूझ तथा प्रेम से दूसरों को देखिये क्योंकि वे भी हम में से एक हैं।

यदि मुझे कुछ पकड़ना है, तो मैं हाथ का प्रयोग करूंगी और चलने के लिए पैर का। इसी प्रकार आपको ज्ञान होना चाहिए कि आपको पोषण के लिए कौन सा सहजयोगी सहायक हो सकता है। तत्काल आपका मस्तिष्क शुद्ध हो जाएगा। मैंने कहा कि हममें करुणा होनी चाहिए, तो आपमें करुणा कहाँ हैं? दीवारों पर? सहजयोग व्यवहार में आना चाहिए, हर समय मेरे फोटो को लेकर बैठा रहना सहजयोग का अभिप्राय नहीं। इसका अभिप्राय है कि आपको करुणा तथा प्रेममय आचरण करना है। दूसरे से प्रेम व्यवहार आप कैसे करते हैं? यदि किसी से आप प्रेम करते हैं तो उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं। मैं जानती हूँ कि आप सब मुझे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं, फिर मेरे लिए तोहफे खरीदते हैं, कष्ट उठाकर भी मेरे लिए सुन्दर फूल लाते हैं, देखते हैं कि मुझे क्या अच्छा लगता है। मैं स्वीकार करती हूँ कि मैं बहुत अधिक खुश हूँ, परन्तु यदि आप सामूहिकता समझें और परस्पर एक-दूसरे को प्रसन्न करने का प्रयत्न करें तो मैं अधिक प्रसन्न होऊंगी। जिसका चित्त दूसरे सहजयोगियों को प्रसन्न करने पर होगा ऐसा सहजयोगी मुझे सर्वाधिक खुश करता है। दूसरों को प्रसन्न करने का निर्णय लेते ही आपकी वाणी परिवर्तित हो मधुर बन जाती है। कैची की तरह चलने वाली आपकी जीभ अब मधु की तरह मधुर हो जाती है। बहुत कम बोलकर भी आप अब दूसरों पर माधुर्य-वर्षा करते हैं। अपने प्रेम का आचरण आप कहाँ करते हैं? हम अपने घर, चित्रों, साज-सज्जा आदि से प्रेम करते हैं, पर क्या मैं अपनी पत्नी-पति या अन्य सहजयोगियों से प्रेम करता हूँ? अपनी सहज-संस्कृति में हमें करुणामय तथा प्रेममय आचरण करना आवश्यक है।

तीसरे स्थान पर धैर्य है। मैं जानती हूँ कि कुछ बच्चे बहुत शरारती हैं, कुछ लोग इतने बातूनी हैं कि कभी-कभी वे मुझे सिरदर्द कर देते हैं। मैं सोचती हूँ कि अच्छा है इसी प्रकार मेरे मुंह को आराम

मिलता है। दूसरी विधि यह है कि अपने दिमाग को वहाँ से हटा लें और बोलने वाले को बोलने दें। अपनी बात कह कर वो आपको परेशान नहीं करेगा और सन्तुष्ट हो जायेगा कि किसी ने उसकी बक-बक को सुना। अत: धैर्य इस कदर आवश्यक है कि अन्य लोग उसे देख सकें। कल मैं तीन घंटे तक बैठ कर सब प्रकार के लोगों तथा समस्याओं से हाथ मिलाती रही। अन्त में जो व्यक्ति आया वह बोला, 'आपके धैर्य को देखकर मेरा धैर्य विकसित हो गया है।' प्रेम धैर्य प्रदान करता है। यही प्रेम आपका पोषण करता है। यह पूर्णतया पक्की विधि है। मैंने यह नहीं कहा, कि आप परमात्मा पर विश्वास करें, आप केवल स्वयं पर विश्वास करें। हम कहते रहते हैं, कि हमें सबको क्षमा करना है, पर हम इस प्रकार का आचरण नहीं करते। लोग छोटी-छोटी बातें याद रखते हैं। मैंने सुना है कि चोट पहुँचाने वाले व्यक्ति को याद रखने का सामर्थ्य सांप में होता है, परन्तु यहाँ तो यह सामर्थ्य मनुष्यों में भी है। पन्द्रह साल पहले की बात को भी याद रख कर लोग कहते हैं कि फलां व्यक्ति ने मुझे चोट पहुंचाई थी, पर वे भूल जाते हैं, उन्होंने लोगों को कैसे कैसे कष्ट दिये। मानव मस्तिष्क में अहं होने के कारण बिना किसी दोष भावना के यह दूसरों को कष्ट देता चला जाता है और प्रति अहं दूसरों द्वारा दिये गये कष्ट अपने में समा कर सदा इनके विषय में शिकायत करता रहता है। आपने यह स्पष्ट अनुभव करना है कि इस तरह के आचरण से आप सामूहिकता को तोड़ रहे हैं।

आपको समझना है कि आपके अगुआ के माध्यम से मेरा सम्बन्ध आपसे है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि आप मुझ तक नहीं आ सकते। मान लो कि मैं अपना हाथ एक सुई पर रख दूं तो हाथ तुरंत ही वहाँ से हट जायेगा। इसका अर्थ यह है कि प्रतिक्रियात्मक कार्य भी है। पर प्राय: हर गतिविधि की सूचना मस्तिष्क को पहुंचती है। इसी प्रकार सहजयोग में आते ही यदि आप अपने अगुआ के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित कर लेते हैं तो अपने तथा अगुआ, दोनों के लिए कठिनाई हो जाती है। पहली बात यह है कि आपको आलोचना नहीं करनी। अपनी बुद्धि का प्रयोग आलोचना के लिए न कीजिए। पश्चिम में तो पहले ही बहुत आलोचना हो चुकी है। मेरा अभिप्राय है उनके आलोचना के नये तरीके हैं, आलोचकों के कारण सारी कला समाप्त हो गयी। आलोचना के भय से कलाकार अपनी कलाप्रदर्शन से घबराते हैं। अब केवल आलोचना बाकी रह गई है और आलोचक दूसरे आलोचकों की आलोचना कर रहे हैं। बस रचनात्मकता समाप्त हो गई। अत: हर चीज़ के गुण पहचानने का प्रयत्न कीजिए। बच्चे तस्वीरें बनाते हैं या चित्रकला, अजीबोगरीब तरह से कभी-कभी ये मेरी शक्ल बनाते हैं, लेकिन कोई बात नहीं। उन्हें उत्साहित करने के लिए मैं सदा उनकी सराहना करती हूँ। हमारे मस्तिष्क में आलोचना का स्थान सराहना को ले लेना चाहिए। सराहना का प्रयोग हमारे आचरण में होना चाहिए, दूसरे लोगों की, उनके बच्चों की सराहना। इसका

अभिप्राय यह भी नहीं कि बाकी सबकी तो आप सराहना करें और अपने पति या पत्नी को कष्ट दें। यह भी असन्तुलन है। परिवार आपकी पहली जिम्मेवारी है, परन्तु दूसरों की सराहना भी आप करें और यह गुण आपमें तभी आ सकता है जब आपमें दूसरों के प्रति ईर्ष्या न हो और यदि आपमें ईर्ष्या हो भी तो उसे भले के लिए उपयोग करें। भला कार्य है कि आप अपने से आध्यात्मिकता में गहन व्यक्ति से ईर्ष्या करें और उससे ऊँचा उठने के लिए कार्य करें। ईर्ष्या यदि मुकाबले के लिए है तो आप अपने से अधिक दयालु, त्यागवान तथा धैर्यशील व्यक्ति से मुकाबला करें। तब यह मुकाबला अधिक पोषक बन जायेगा।

आक्रमणशीलता सामूहिकता का सबसे बड़ा शत्रु है। कुछ लोग मूलत: आक्रमक होते हैं, उनके बात करने का ढंग आक्रामक होता है या बहुत आक्रामक परिवार से संबंधित होते हैं, अथवा हीन-भावना या श्रेष्ठता-मनोग्रंथी ग्रस्त होते हैं। उनमें असुरक्षा का भय होता है। उनमें भूतबाधा भी हो सकती है। वे दूसरों पर प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न करते हैं। अपने से उच्च लोगों के लिए उनके मन में बहुत विरोध होता है। यह दोष दूर होना आवश्यक है। आपको नम्र आचरण करना है, नम्र बनने का प्रयत्न कीजिए। एक चुटकुला-किसी सीढ़ी पर एक व्यक्ति ऊपर चढ़ रहा था और दूसरा नीचे उतर रहा था। पर जाते हुए व्यक्ति ने दूसरे से कहा, 'कृपया चलिए।' तो उत्तर मिला, 'मैं मूर्खों के लिए नहीं चलता।' ऊपर जाते हुए व्यक्ति ने कहा, 'पर मैं चलता हूँ' और ऊपर को बढ़ गया।

इस प्रकार नम्रता कार्य करती है। दूसरे लोगों का आचरण आपके प्रति चाहे नम्र न हो आपको उनके प्रति नम्र होना है क्योंकि आप उनके बर्ताव को सहन करने के लिए सशक्त हैं। इस प्रकार की नम्रता का व्यवहार आपको करना है। यह गुण यदि आपमें आ जाएगा, तो आप स्वयं हैरान होंगे कि आपके अन्दर स्वार्थभाव समाप्त हो जाएगा। मैं जानती हूँ कि आप सब मुझ पर बहुत सा धन खर्च करने को तैयार हैं। मुझे उपहार देना चाहते हैं। उपहार लेना अब बन्द कर दिया है। व्यक्तिगत रूप से अब आप मुझे कोई उपहार नहीं दे सकते। परन्तु उदारता की एक सामान्य दशा है, करुणा की उदारता, धैर्य में उदारता, सहानुभूति में उदारता और भौतिकता की उदारता। मैं जब किसी चीज़ को देखती हूँ तो तत्काल सोचती हूँ कि यह मुझे खरीद लेनी चाहिए क्योंकि इसे मैं किसी भी स्त्री या पुरुष को, किसी उद्देश्य के लिए या किसी संस्था के लिए दे सकती हूँ। बाजार में होते हुए यदि मुझे प्यास लगे तो अपने लिए शीतल पेय खरीदने की बात मैं कभी नहीं सोचती। पूरी जिन्दगी में अपने लिए फ्रिज मैंने कभी नहीं खोला परन्तु दूसरों के लिए मैं भागती फिरती हूँ और उनके लिए खाना बनाती हूँ। अकेली कभी मैं घर में हूँ और रसोइया न हो तो अपने लिए खाना नहीं बनाती। घर में यदि कोई न हो,

मेरे पति भी न हो तो मैं दो-दो, तीन-तीन दिन नहीं खाती और नौकर मेरे पति से शिकायत करते हैं।

'वास्तव में मैंने खाना नहीं खाया, मुझे पता ही न था।' यदि मैं खाती हूँ तो केवल इसलिए कि वे घर पर होते हैं और मुझे उनके साथ खाना पड़ता है। मैं चाय भी नहीं पिया करती थी पर क्योंकि मेरे पति को चाय पसन्द है मैं भी चाय पीती हूँ ताकि आदत बनी रहे, नहीं तो कठिनाई होगी। यह केवल दूसरों के साथ समझौता करना है, यह कठिन नहीं है। यहाँ वहाँ एक-दो बातें प्रसन्न करने वाली। दूसरों को प्रसन्न करने में कोई बुराई नहीं केवल पत्नी को ही यह नहीं करना, पति को भी करना चाहिए। इस तरह का आचरण केवल पति पत्नी में नहीं होना चाहिए, माता-पिता और बच्चों में भी होना चाहिए। सहजयोग परिवार में भी आपको एक-दूसरे के साथ समझौता करना चाहिए। आप झगड़ा शुरू कर देते हैं, लड़ाई तो आपके अन्तस में होनी चाहिए। जहाँ तक मैं जानती हूँ मानव तथा सामूहिकता की समस्या अत्यंत पुरानी गाथा है।

दिल्ली में हमने एक आश्रम शुरू किया है, प्रात: काल इकठ्ठे होकर लोगों को वहाँ आते मैं देखती हूँ। यह एक मन्दिर, एक चर्च की तरह से है। लोग वहाँ आते हैं और बैठकर सामूहिक ध्यान करते हैं। सामूहिकता को अनुभव करने का सर्वोत्तम तरीका सामूहिक ध्यान है। क्योंकि मैं इस आश्रम में रहती हूँ, मैं यहाँ हूँ, अत: आप भी घर छोड़ कर यहाँ आ जाइए। ध्यान-धारणा से आपको बहुत लाभ होगा। मैलबोर्न में हमारे बहुत से लोग है और अब लोगों की संख्या बहुत बढ़ जाती है तो गहनता बहुत कम हो जाती है और सामूहिकता की गहनता का अति शक्तिशाली होना आवश्यक है। आपमें परस्पर अति गहन सम्बन्ध होने चाहिए। किसी की प्रशंसा जब आप करते हैं, तो मुझे बहुत अच्छा लगता है। साधारणतया मैंने देखा है कि मेरी उपस्थिति में लोग नकारात्मक लोगों के विषय में ही बात करते हैं। सकारात्मक लोगों के विषय में मैं कभी कुछ नहीं सुन पाती। अत: मुझे सकारात्मक लोगों, जो कि महान हैं और अच्छे कार्य कर रहे हैं, के विषय में जानकर प्रसन्नता होगी। नकारात्मक लोगों को भूल जाईये वे स्वयं ही छट जायेंगे। अत: अच्छे कार्य करने वाले सकारात्मक लोगों के विषय में बताना ही सर्वोत्तम है।

परमात्मा आपको धन्य करें।

कमल सौन्दर्य का प्रतीक है और उनका गुलाबी रंग प्रेम का प्रतीक। ये प्रतीक है कि जिस व्यक्ति के पास लक्ष्मी हो, धन हो, उसे कमल की तरह से उदार होना चाहिए। कमल छोटे से भँवरे को भी अपने अन्दर सोने का स्थान देता है। अपनी पंखुड़ियों से ढककर उसे सुख पहुँचाता है और उसकी रक्षा करता है।

(प.पू.श्रीमाताजी, लक्ष्मीतत्व, इटली, २१/१०/१९९०)

✦ प्रकाशक ✦

निर्मल ट्रैन्सफर्मेशन प्रा. लि.

प्लॉट नं.१०, भाग्यचिंतामणी हाउसिंग सोसाइटी, पौड रोड, कोथरुड, पुणे - ४११ ०३८.

फोन : ०२०-२५२८६५३७, ६५२२६०३१, ६५२२६०३२, e-mail : sale@nitl.co.in, website : www.nitl.co.in

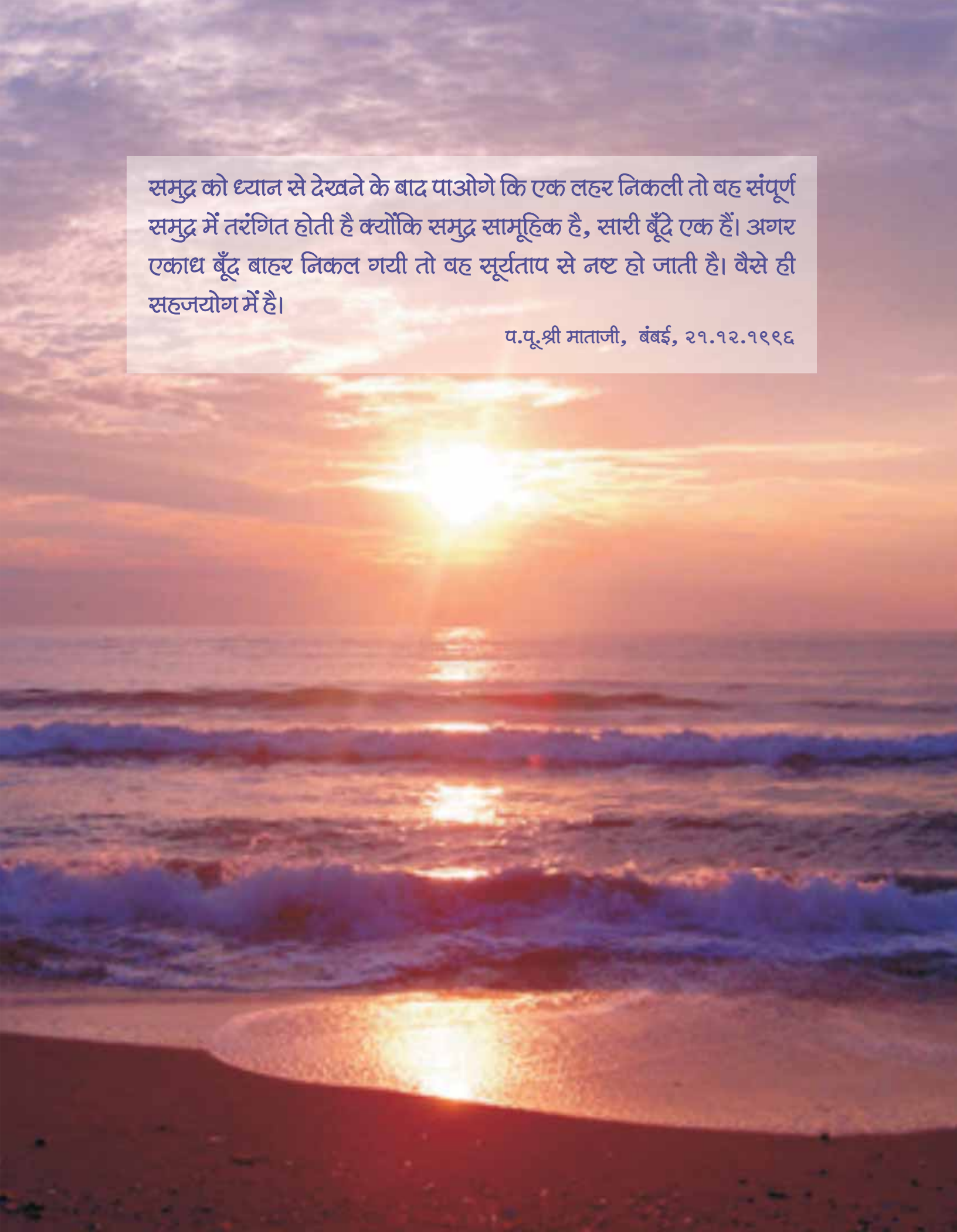

समुद्र को ध्यान से देखने के बाद पाओगे कि एक लहर निकली तो वह संपूर्ण समुद्र में तरंगित होती है क्योंकि समुद्र सामूहिक है, सारी बूँदे एक हैं। अगर एकाध बूँद बाहर निकल गयी तो वह सूर्यताप से नष्ट हो जाती है। वैसे ही सहजयोग में है।

प.पू.श्री माताजी, बंबई, २१.१२.१९९६